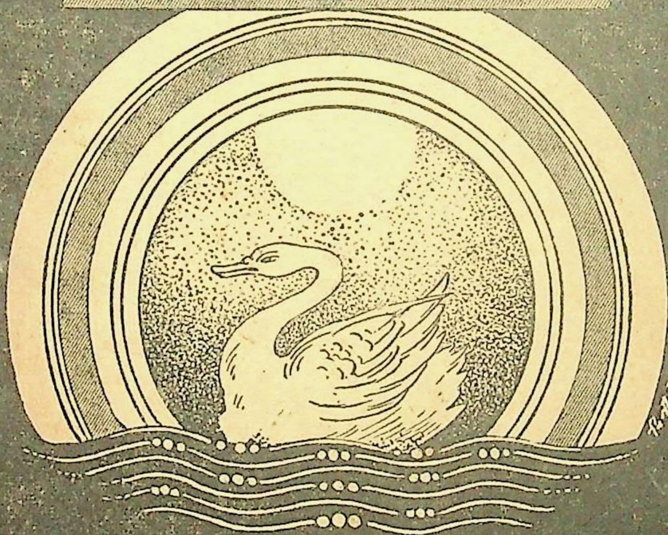
वेद प्रकाश माला

मुर्दा क्यों जलावें ?

ले०—श्री प्रेमशरण प्रणत वेदवाचस्पति



गोविन्दराम हासानन्द
नई सड़क देहली

५८ १)

प्रचार योग्य सस्ते और सुन्दर ट्रैक्ट

मूल्य प्रत्येक ट्रैक्ट -) सैंकड़ा ४) चार रुपया

१ मनुष्य बन	१६ दयानन्द दिग्विजय
२ गायत्री माता	१७ चोटी का महत्व
३ ईश्वर सिद्धि	१८ गुरुविरजानन्द
४ आस्तिक नास्तिक संवाद	१९ मांस खाना छोड़ दो
५ पितृ श्राद्ध विचार	२० मर्यादा पुरुषोतम राम
६ सुख का साधन	२१ देश सुधार होली
७ ईश्वरोपासना	२२ मूर्ति पूजा विचार
८ कल्याणी बन	२३ भक्ति के लाभ
९ आर्यों का आदि देश	२४ आर्य समाज का उद्देश्य
१० धर्म और अधर्म	२५ वेद माता
११ स्वामी श्रद्धानन्द	२६ श्रद्धामाता
१२ तत्व वेता दयानन्द	२७ धरती माता
१३ पण्डित लेखराम	२८ धर्म की रक्षा करो
१४ सीता माता	२९ सन्ध्या
१५ गो माता	३० हवन मन्त्र

उपरोक्त ३० ट्रैकों का संग्रह सजिल्द मूल्य २)

३१ ऋषि वेद भाष्य का महत्व	४० पति व्रत धर्म
३२ गोपाल दयानन्द	४१ ब्राह्मण समाज और मूर्तिपूजा
३३ भक्ति वाद की रूप रेखा	४२ ईश्वरोपासक दयानन्द
३४ वैदिक भक्ति वाद	४३ ईश्वरावतार
३५ अंग्रेजी शिक्षा से हानि	४४ महात्मा कृष्ण
३६ सत्य की महिमा	४५ ईसाईयों का भयंकर षडयन्त्र
३७ आ. स. की उन्नतिकासाधन	४६ सामाजिक व्यवहार
३८ श्यामाप्रसाद मुकर्जी	४७ वर्ण व्यवस्था
३९ वैदिक काल में तोप बन्दूक	४८ कर्म व्यवस्था

सब प्रकार की पुस्तकें मिलने का पता:—

गोविन्दराम हासानन्द, नई सड़क देहली।

॥ ओ३म् ॥

शवदहन की सर्वोपरिता

मृतक देह को जलाना आवश्यक है

(लेखकः—श्री प्रेमशरण प्रणत वेदवाचस्पति अध्यक्ष
आर्यावर्त प्रकाशनकेन्द्र, आगरा)

पाठको ! सृष्टि नियम के अनुसार, प्रत्येक विषय और विज्ञान-व्यवहार का ज्ञान, कराने के लिये, स्रष्टा की ओर से मानवदेह की अन्तिमअवस्था का निरूपण करते हुए वेद का उपदेश है—

"ओं वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्त ँ शरीरम् ।
ओ३म् क्रतो स्मर क्लिबे स्मर कृत ँ स्मर ॥"

देखो--यजुर्वेद अ० ३६

तात्पर्य—प्रयाण-काल में योगी ओ३म् का स्मरण करते हैं अथवा किया करें ।

क्योंकि मृत्यु-समय बड़ा भयङ्कर होता है और यमत्रास से बचने के लिए जप, तप, योगाभ्यास और प्रार्थनाएं मनुष्य करते हैं। मृत्युसमय मनुष्य के समस्त शुभाशुभ कर्मों का चित्र खिंचकर उनके नेत्रों के सम्मुख आ जाता है। अतः इस मन्त्र में शरीर

को भस्मीभूत करने का विधान पदार्थविद्या के निरूपण द्वारा किया गया है—

मंत्र में जहां आस्तिकता का अमृतोपम आदेश है वहां मरणानन्तर नरमेध अथवा शवदाह की सर्वोपरिता का भी स्वर्णोपम और सर्वग्राह्य सिद्धान्त इस प्रकार प्रतिपादन किया गया है कि—हे धर्म करने वाले जीव ! तू शरीर छूटते समय ओ३म् नाम का स्मरण कर, अपने सामर्थ्य से ईश्वर के स्वरूप का स्मरण कर । यह शरीर का अन्त भस्म होने वाली ही वस्तु है * ।

महर्षि दयानन्द ने अपने भाष्य में इस मन्त्र का भावार्थ इस प्रकार दिया है—

मनुष्यों को चाहिये कि जैसे मृत्यु के समय में चित्त की वृत्ति होती है और शरीर से आत्मा का पृथक् होना होता है,वैसे ही इस शरीर को जलानेका प्रयत्न किया करें । अन्त्येष्टि संस्कार का दिव्य सन्देश वेद से हमें मिलता है। वह एक मननीय और स्वाध्याय की वस्तु है । हम ऋषि दयानन्द की

---

*विशेष प्रकाश 'अन्त्येष्टि-कर्म-पद्धति' के मन्त्रों से भी जीव की गति और जन्म मरण पर पड़ता है। मृतदाह के बाद शोक-निवृत्ति के लिए इस की कथा-वार्ता और चिन्तन, गरुड़ पुराण की भ ति होने से, सर्वसाधारण तथा दुखी शोक-सन्तप्त सज्जनों को सच्ची सान्त्वना की आशा है।

एतद्विषयक ऊहा-पोह को स्थानाभाव से आगे के निमित्त छोड़ कर यहां बताना चाहते हैं कि सार्वभौम कल्याण और विश्व के वातावरण को व्यवस्थित रखने का मृ दाह का एक सर्वोपरि साधन ऋषि दयानन्द ने समझ अन्त्येष्टि + को एक यज्ञ बतलाया और जहाँ-तहाँ प्रकरणानुसार इस विषय पर अच्छा प्रकाश डाला है। उन्होंने एक पत्र कर्नल अलकाट अध्यक्ष थियोसोफीकल सुसाइटी न्यूयाक (अमरीका) को, उनके ३० मई सन् १८७८ ई० के पत्र के उत्तर में, २६ जुलाई सन् १८७८ ई० को संस्कृत में लिखा था जिसे हमने ज्यों-का-त्यों महर्षि दयानन्द का 'अमेरिकावासियों को सन्देश' + शीर्षक देकर प्रकाशित × किया है और जिसमें से

+इस शरीर का संस्कार (भस्मान्तम्) अर्थात् भस्म करने पर्यन्त है। शरीर का आरम्भ ऋतुदान और अन्त श्मशान अर्थात् मृत कर्म में है। देखो—संस्कारविधि अन्त्येष्टि कर्म।

+विदेशों के प्रचार प्रेमी पाठक इस ट्रैक्ट को अवश्य पढ़ें और देखें कि वे अब भी अमेरिका को क्या सन्देश दे सकते हैं।

×इस पत्र में महर्षि दयानन्द के मृतक दाह संस्कार के संबन्ध में स्पष्ट शब्द इस प्रकार थे—

"वेदोक्तानुसारेण वक्ष्यमाणरीत्या मृतकक्रिया

शवदाह सम्बंधी ऋषि का अमेरिका आदि पाश्चात्य देशों को परामर्श का प्रकार इन शब्दों में है।

"जब कोई मनुष्य मर जावे तो उचित है कि मृतक शरीर को सम्यक् उत्तम स्नान कराके, उत्तम सुगन्धि से अनुलेपकर, सुगन्धियुक्त शुद्ध नवीन वस्त्र पहना मलीन वस्त्र उतार कर, श्मशान भूमि में-ले जावें। वहाँ वेदि* इतने परिमाण की बनावें कि जितना पुरुष ऊर्ध्व बाहु+(पुरुष खड़ा होकर ऊपर

कर्त्तव्या। तद्यथा—सेयं संस्कारविधिग्रन्थे विस्तरशः प्रतिपादिता तथाप्यत्र संक्षेपतो लिख्यते।"

अर्थात् वेदोक्त अनुसार वक्ष्यमाण रीति से मृतक—क्रिया करनी चाहिये, यद्यपि संस्कारविधि में विस्तारपूर्वक उसका प्रतिपादन किया है तथापि संक्षेप से यहां लिखते हैं।

*वेदि का विधान और मृतक-क्रिया की विधि, आश्वलायन गृह्यसूत्र अ० ४ कं १ सू० ६, ७, ८, १०, १५, १६, १७ में इस प्रकार है—'(१) संस्थिते भूमिभागं खानयेद्दक्षिणपूर्वस्यां दिशि दक्षिणाऽपरस्यां वा (२) दक्षिणाप्रवणं प्राग्दक्षिणाप्रवणं वा प्रत्यग्दक्षिणाप्रवणमित्येके (३) यावानुद्बाहुकपुरुषस्तावदायामम् × (४) व्याममात्रं तिर्यक् वितस्त्यर्वाक् (५) केशश्मश्रुलोमनखानीत्युक्तं पुरस्तात् (६) द्विगुल्फं बर्हिराज्यं च (७) दधन्यत्र सर्पिरानयन्त्येतत्पित्र्यं पृषदाज्यम् (८) अथैतां दिशमग्नीन्नयन्ति यज्ञ-

को हाथ उठाते हुए) हो उतनी लम्बी और दोनों हाथों को लम्बे उत्तर-दक्षिण पार्श्व में करने से जितना परिमाण हो उतनी चौड़ी, उरु तक गहरी और नीचे बारह अंगुल हो। फिर जलको छिड़कावें तत्पश्चात् शरीर के बराबर घृत को वस्त्र से छानें। उसमें प्रति सेर घृत में एक रत्ती कस्तूरी और एक

पात्राणि च।" इसी को आधार बनाकर महर्षि-ने संस्कारविधि में लिखा है, देखो हमारी अन्त्येष्टि कर्मपद्धति और स्वामी जी का लेख।

यह शिक्षा और सन्देश अमेरिकावासियों को इसलिये दिया गया कि उनकी इस विषय में जिज्ञासा थी और एक इस प्रकार के पत्र में २१ मई सन् १८६२ को न्यूयार्क अमरीका से श्री हेनरी ऐस० अल्काट थियौसौफीकल सुसाइटी के अपने पत्र संख्या १७ ता० १८ फर्वरी १८७८ में लिखते हैं कि १८ महीने बीते इस बड़े नगर में जिसमें १० लाख से अधिक ईसाई जन संख्या है हमने अपनी सोसाइटी में एक

की उन असभ्य प्रथाओं के अनुसार दफन किया और अग्नि के चिन्ह प्रकाश और पुरानी कैचली जिसे सर्प सहित ले गये थे और सब चिन्हों का प्रयोग किया, छः महीने के पीछे हमने इस शव को अस्थायी आराम के स्थान से निकाल कर अपने पूर्वज आर्यों की रीति के अनुसार जलाकर भस्म कर दिया।" देखो ज्वालाप्रसाद प्रेस मेरठ द्वारा मुद्रित पत्र पृष्ठ ४।

एक माशा केशर पीस कर यथावत् मिलावें। चन्दन, पलाश, आम्रादिक काष्ठों को लेकर वेदी के गढ़े के परिमाण से इनके खण्ड करें। नीचे से आधी वेदी को भर कर उसके ऊपर में मृतक के देह को रक्खे। कपूर गुग्गुल, चन्दन आदि के चूर्ण को मृतक की देह के चारों ओर बिखेरें। फिर उन्ही काष्ठों से तट से ऊपर वितस्ति मात्र वेदि चिनकर अग्नि लगावें उस घृत को थोड़ा-थोड़ा लेकर यजुर्वेद के ३६ वें अध्याय के एवं ४०वें अध्यायके प्रति मंत्र को उच्चारण कर चारों ओर जलावें। फिर जब शरीर भस्मीभूत हो जावे तो वहां से लौट कर जलाशय वा अपने २ गृह में पहुँच कर स्नानादि कर निःशोक हो यथा-योग्य अपने अपने कार्य करें। फिर जब दाह दिन से तृतीय दिन सारा शरीर शीतल हो जावे तो वहां जाकर अस्थि (हड्डियों) सहित समस्त भस्म लेकर शुद्ध देश में किसी स्थान पर गढ़े को खोदकर वहां उस सबको रखे गढ़े में मिट्टी से ढांप दें। इतना ही वेदोक्त सनातन उत्तमोत्तम मृतक संस्कार है। इससे न्यूना-धिक नहीं। इसी प्रकार आप के पास अपने मित्रों की जो हड्डियाँ हैं उनको भी कहीं शुद्ध भूमि में गढ़ा खोदकर रखलें और मिट्टी से गढ़े को ढक दें।"

इसी प्रकार अपने स्वीकार-पत्र में भी ऋषि ने अपनी इच्छा प्रकट करते हुए उसकी पूर्त्यर्थ परोप-कारिणी सभा को इस प्रकार आदेश दिया है—
"जैसे इस सभा को वर्तमान में मेरे और मेरे पदार्थों

की स्वसामर्थ्यानुसार रक्षा और वृद्धि करने का अधिकार है अर्थात् जब मेरा देह छूटे तो न इसको गाड़ें, न इसको जल में बहायें, न जंगल में फेंकें; किंतु चंदन की चिता बनावें और जो यह संभव न हो तो दो मन चन्दन, चार मन घी, पांच सेर कपूर, अढ़ाई मन अगर, तगर और दस मन काष्ठ लेकर वेद के अनुसार जैसा कि संस्कारविधि पुस्तक में लिखा है वेद मन्त्रों से जो उसमें लिखे हैं भस्म करें। इसके सिवाय और कुछ वेद के विरुद्ध न करें।"

ऋषि ने सत्यार्थ-प्रकाशादि ग्रन्थों में समक्ष रखकर जो और जिस प्रकार का उत्तर दिया है उसे हम प्रश्नोत्तर के रूप में रखते हैं जिससे की गाड़ने और जलाने के हानि लाभ भली भाँति विदित हो जावें।

मुर्दा जलाना चाहिये या गाड़ना ?

इस विषय पर शंका करते हुए जब एक मुसलमान वा ईसाई अथवा संन्यासी आदि इस प्रकार प्रश्न करते हैं।

जिससे प्रीति हो उसे कैसे जलावें ?

प्रश्न:—"देखो ! जिससे प्रीति हो उसको जलाना अच्छी बात नहीं है और गाड़ना तो (ऐसा है) जैसा कि उसको सुला देना है, इसलिये गाड़ना अच्छा है।"

उत्तर—"जो मृतक से प्रीति करते हो तो अपने घर में क्यों नहीं रखते ? और गाड़ते भी क्यों हो ? जिस

जीवात्मा से प्रीति थी, वह तो निकल गया अब दुर्गन्धमय मिट्टी से क्या प्रीति ? और जो प्रीति करते हो तो उसको पृथ्वी में क्यों गाड़ते हो ? क्योंकि (यदि) किसी से कोई कहे कि (हम) तुझ को भूमि में गाड़ देवें तो वह सुन कर कभी प्रसन्न नहीं होता, उस के मुख, आँख और शरीर पर धूल, पत्थर, ईंट, चूना डालना, (और) छाती पर पत्थर रखना कौनसी प्रीति का काम है ? और सन्दूक में डालके गाड़ने से बहुत दुर्गन्ध होकर पृथ्वी से निकल वायु को बिगाड़ कर दारुण रोगोत्पत्ति करता है।

गाड़ने के दोष

प्रश्न—गाड़ना बुरा क्यों है ?

उत्तर—एक मुर्दे के लिये कम से कम छः हाथ लम्बी और चार हाथ चौड़ी भूमि चाहिये। इसी हिसाब से सौ हजार वा लाख अथवा करोड़ों मनुष्यों के लिए कितनी भूमि व्यर्थ रुक जाती है, न वह खेत, न बागीचा और न बसने के काम की रहती है, इस लिए सब से बुरा गाड़ना है।

जलाना, गाड़ना, जलप्रवाहादि में कौन ठीक है ?

प्रश्न—जलाना, गाड़ना, जल प्रवाह करना और जंगल में फेंक देना, इन चारों में से कौनसी बात अच्छी है ?

उत्तर—सबसे बुरा गाड़ना है, उससे कुछ थोड़ा बुरा जल में डालना है; क्योंकि उसको जल जन्तु

उसी समय चीर फाड़ कर खा लेते हैं; परन्तु जो कुछ हाड़ वा मल जल में रहेगा, वह सड़ कर जगत् को दुःखदायक होगा। उससे कुछ एक थोड़ा बुरा जंगल में छोड़ना है; क्योंकि उसको मांसाहारी पशुपक्षी नूंच खायेंगे, तथापि जो उसके हाड़ की मज्जा और मल सड़ कर जितना दुर्गन्ध करेगा उतना जगत् का अनुपकार होगा और जो जलाना है वह सर्वोत्तम है। क्योंकि उसके पदार्थ अणु हो कर वायु में उड़ जायेंगे।

क्या जलाने से दुर्गन्ध नहीं होता ?

प्रश्न—मुर्दा जलाने से भी तो दुर्गन्ध होता है ?

उत्तर—जो विधि से जलावें तो थोड़ा सा (दुर्गन्ध) होता है परन्तु गाड़ने आदि से बहुत कम (दुर्गन्ध होता है।

जलाने की विधि

प्रश्न—किस विधि से मुर्दे को जलाया जावे जिससे दुर्गन्ध बिल्कुल न हो ?

उत्तर—मुर्दे के तीन हाथ गहरी * साढ़े तीन

---

*योरोप में ऋषि दयानन्द के ऐसे कथन के पश्चात् अन्त्येष्टि संस्कार में भारी क्रान्ति और सुधार हो गया है और वहां भस्म-विधि के दहन सिद्धान्त को वैज्ञानिक रूप में व्यवहार्य बनाने के लिए नियमित समितियां बन गई हैं जिसका निरूपण धर्मवीर पं० लेखराम जी आर्य पथिक की पुस्तक में है। बर्नाडशा जैसे तत्त्ववेत्ता वैज्ञानिक का दाह संस्कार उनके स्वीकार-पत्रानुसार किया गया था।

हाथ चौड़ी, पांच हाथ लम्बी तले में डेढ़ बीता, अर्थात् चढ़ाव व उतार से वेदि खोदकर शरीर के बराबर घी, उसमें एक सेर में रत्ती भर कस्तूरी, मासा भर केशर डाल, न्यून से न्यून आध मन चंदन, अधिक चाहें जितना लें, अगर तगर कपूर आदि, और पलाश आदि की लकड़ियों को वेदि में जमा कर उस पर मुर्दा रखके पुनः चारों ओर ऊपर वेदि के मुख से एक एक बीता तक भरके, घी की आहुति देकर जलाना चाहिये। यदि इस प्रकार से दाह करें, तो कुछ भी दुर्गन्ध न हो, किन्तु इसी का नाम "अन्त्येष्टि" "नरमेध" और पुरुषमेध" यज्ञ है।

स० प्र० स० १३

शवदाह करने की वेदि का परिमाण पुरुष खड़ा हो कर ऊपर को हाथ उठावे उतनी लम्बी और दोन हाथों को लम्बा उत्तर दक्षिण पार्श्व में करने से जितना परिमाण हो अर्थात् मृतक के साढ़े तीन हाथ, अथवा तीन हाथ से ऊपर चौड़ी होवे और छाती के बराबर गहरी होवे। देखो संस्कारविधि

प्राचीन आर्य लोगों में अन्त्येष्टि एक यज्ञ है उस में दहन को मुख्य माना है। वे शमशान भूमि में एक वेदि बनाया करते और उसे पक्की ईंटों से चुनते फिर उसमें मृत देह को जलाते समय बीस सेर घृत डाल कर चंदनादि सुगंधित पदार्थ भी डालते थे। शुक्ल यजुर्वेद के ३९वें अध्याय में इस विषय का

वर्णन किया गया है। आज कल अन्त्येष्टि संस्कार यथा-विधि नहीं होते हैं। कट्टहाओं की बेशक चैन से उड़ती है सो यह जबर्दस्ती है। सबको उचित है कि संस्कारों को फिर से सुधारें। जिससे कल्याण सबका हो। —विशेष देखो पूना-प्रवचन

जल-प्रवाह क्या परोपकार नहीं ?

प्र०—देह जल में डालने से उसे मछलियां खा जाती हैं क्या यह परोपकार नहीं है ?

उ०—परंतु जल जो बिगड़ता है इसका भी तो विचार करना चाहिये। प्रेतों को डालने से गंगा सदृश महानदियों तक के जल में विकार उत्पन्न होता है तो फिर छोटी छोटी नदियों का तो कहना ही क्या है ? बहुत से लोग गंगा में हड्डियां ले जा कर डालते हैं, बतलाओ यह कितना भारी भोलापन है ? मरे हुए प्राणी की देह मृत्तिका है उसे गंगा में डालने से क्या लाभ होगा ? कहने की आवश्यकता नहीं है कि वन में फैंकने से भी दुर्गंध उत्पन्न हो कर रोग उत्पन्न होता है।

—पूना-प्रवचन पृष्ठ ८५

जलाने को घी कहां से आवे

प्र०—जलाने के लिये कम से कम २० सेर घी एक ग़रीब आदमी कहां से लावे ?

उ०—यदि दरिद्र हो, तो बीस सेर से कम घी चिता में न डाले, चाहे वह भीख माँगने वा जाति

वाले के देने, अथवा राज से मिलने से प्राप्त हो, परंतु उसी प्रकार दाह करे, और जो घृतादि किसी प्रकार न मिल सके, तथापि गाड़ने आदि से केवल लकड़ी से भी मृतक का जलाना उत्तम है, क्योंकि एक विश्वाभर भूमि में अथवा एक वेदि में लाखों करोड़ों मृतक जल सकते हैं। भूमि भी गाड़ने के समान अधिक नहीं बिगड़ती। स० प्र० स० ११

"और जो महादरिद्र भिक्षुक हो कि जिसके पास कुछ भी नहीं है उसको कोई श्रीमान् वा पंच बनके आध मन से कम घी न देवें और श्रीमान् लोग शरीर के बराबर तौल के चन्दन, सेर भर घी में एक रत्ती कस्तूरी, एक मासा केशर, एक एक मन घी के साथ सेर भर अगर, तगर और घृत में चन्दन का चूरा भी यथाशक्ति डाल कपूर, पलाश आदि के पूर्ण काष्ठ, शरीर के भार से दूनी सामग्री श्मशान में पहुँचावें।" —देखो संस्कारविधि अन्त्येष्टि कर्म

इस प्रकार वेदोक्त आदेश जिन मन्त्रों के आधार पर ऋषि ने दिये हैं उनमें वेदि को खोदने का विधान स्पष्ट रूप में है जिसके आधार पर भ्रमवश उन सैमेटिक मत वालों ने जिनमें इस प्रकार का भ्रम घर कर गया है कि मरणान्तर जीवात्मा देह में से निकल कर क़ब्रों या समाधियों के निकट घूमा करता है, गड्ढा खोद कर उसमें मृतकों को दबाना आरम्भ कर दिया और उन्होंने यह भी गढ़न्त गढ़ ली कि

प्रलय के दिन नरसिंहा बजेगा और वे सब मुर्दे जी उठेंगे। उन्हें मृत्यु के दूत ले जायेंगे। ऐसी भ्रान्त भावनाएं यहूदी, ईसाई, मूसाई और मुहम्मदियों में किस प्रकार फैली इसका विवेचन हमारे अन्य पुस्तकों में विद्यमान है। सम्प्रति हमें यह कहना आवश्यक प्रतीत होता है कि यह कबरों में मृतक को गाढ़ना सब प्रकार से दूषित और विज्ञान-विपरीत, पापकारी प्रणाली है और इस से ईश्वरीय आदेश का उल्लंघन और जगत् का अनुपकार और असाधारण अहित होता है। मूर्तिपूजा, मृतक-पूजा और मनुष्य-पूजा आदि का मूल कारण भी ऐसी ही कुप्रथाएं हैं जिनके मूल पर कुठराघात वर्तमान विज्ञान-युग में किया जाना अत्यन्त आवश्यक था, अतः ऋषि ने जो संकेत किया तो उसका भारी प्रभाव पड़ा और योरोप आदि पाश्चात्य देशों में एक हलचल मच गई। वहां मृतकों के दाह रूपी सत्रों का सूत्रपात हो गया। भारत में भी एक हलचल मच गई। शव दाह के सम्बन्ध में स्वास्थ्य विशारदों डाक्टरों, ईसाई, मुसलमान और आर्य सम्पादकों की सम्मतियों और ऋषि के लेखों का प्रभाव विश्वव्यापी रूप में यहां तक पड़ा कि लुधियाने के ईसाई पत्र 'नूरे अफ्शाँ' को स्वीकार करना पड़ा—"भारतवर्ष के अंग्रेजी पत्र 'पायोनीयर' प्रयाग और कलकत्ते के इंगलिश मैन, ने इंग्लैंड की स्वास्थ्य सम्बन्धी कांग्रेस के इस प्रस्ताव को पसन्द किया है कि मृतकों को दाह गाड़ने की अपेक्षा अधिक उपयोगी है।"

पाठक गण !

दाहकर्म की आवश्यकता और महत्ता का आधुनिक विज्ञानवादियों ने युक्तियुक्त और क्रियात्मिक समर्थन किया है और वैदिक सिद्धान्त के प्रचारक महर्षि दयानन्द की दिग्विजय से हमारा मस्तिष्क विदेशियों के सम्मुख ऊंचा हुआ है इसका हमें भारी हर्ष है, परन्तु अब आवश्यकता है कि, जिस प्रकार विदेशों में दहन-कार्य का नियमित संचालन जन-स्वास्थ्य-संरक्षिणी सभाओं और समितियों द्वारा हो रहा है उसी प्रकार आर्यसमाजों के आधीन शासन द्वारा ऐसी उप समितियां बनाई जायें जो मृतकदाह-विषयक व्यर्थ प्रथाओं में सुधार करायें तभी हमारा यह आदेश कार्य सिद्धान्तानुरूप होगा और जनता हमारा अनुसरण करेगी।

———

महालक्ष्मी प्रेस, दरीबा कलां, देहली।